IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 11, June 2026
Impact Factor: 8.2

# मुगलकालीन बघेलखण्ड की संस्कृति

डॉ. सुधा सोनी
प्राध्यापक इतिहास, शास. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
सुमन कुशवाहा
शोधार्थी–इतिहास, शास. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

शोध सारांशः

हम आदमी अपनी जन्म भूमि को इसलिये नहीं भूल सकता कि वहाँ उसके संस्कार बने हैं। यही संस्कार संस्कृति का निर्माण करते हैं। जिन परम्पराओं और आस्थाओं में जिस आदमी का बचपन बीतता है, उन्हीं परम्परा और आस्थाओं का गहरा प्रभाव उसके जहन में इस तरह घुल–मिल जाता है कि उसे अलग नहीं किया जा सकता या यूँ कह लीजिए कि उसके खून का रंग संस्कारों से निर्मित होता है। मनुष्य के अंदर की सातों सतहों पर किसी खास अंचल के संस्कारों की अमिट छाप लग जाती है, तब वह उस अंचल की संस्कृति का अविभाज्य अंग हो जाता है। इस प्रकार वह व्यक्ति उस संस्कृति के कारण अलग पहचाना जाता है। बाद में मनुष्य कितने ही बदले हुए वातावरण में रहने लगे फिर भी जन्मभूमि, माता–पिता, परिवार, समाज द्वारा प्रदत्त संस्कृति को मनुष्य कभी भूल नहीं पाता। उक्त बिन्दुओं का इस शोध पत्र में समावेश किया गया है।

मुख्य शब्द : मुगलकालीन, बघेलखण्ड, संस्कृति, संस्कार, अविभाज्य अंग, वातावरण आदि।

प्रस्तावना :–

परम्परा और आस्थाओं का गहरा प्रभाव उसके जहन में इस तरह घुल–मिल जाता है कि उसे अलग नहीं किया जा सकता या यूँ कह लीजिए कि उसके खून का रंग संस्कारों से निर्मित होता है। मनुष्य संस्कृति का निर्माता है और उसका सजग संवाहक भी। प्राचीन संस्कृति में से नयी संस्कृति का जन्म भी मनुष्य की आवश्यकता और यद्रिच्छा पर निर्भर करता है। विभिन्न संस्कृतियों का योग भी यौगिक संस्कृति का कारण होता है। संस्कृति, संवेदनशीलता की भूमि पर खड़ी होती है। उसके बंध इतने लचीले होते हैं कि किसी भी विजातीय संस्कृति के प्रभावशील तत्व उसके घेरे में आ सकते हैं।

यह कहना सर्वथा गलत नहीं हो सकता। किसी भी संस्कृति का निर्माण हजारों–लाखों वर्षों में होता है। उसमें आदमी की श्रम शक्ति की प्रमुख भूमिका होती है। मनुष्य ने जब से सीधे खड़े होना सीखा तब से उसे उसके कार्यों को करने में और अधिक गति मिली। उसने दौड़ना, शिकार का पीछा करना, संकटों से बचाव करना, खेलना, उछलना, कूदना, हाथों का इस्तेमाल करना, नृत्य करना, बोझ ढोना आदि में महारत हासिल कर ली। आज भी घने जंगलों में निवास करने वाली प्रिमीटिव्ह जनजातियाँ शासन के प्रतिबंधों के बावजूद खेती करने में नहीं चूकती हैं। पैर और हाथों के प्रयोग से औजार और पहिये की संस्कृति का विकास हुआ।

पहिये के आविष्कार को मनुष्य के हाथों और मस्तिष्क का चमत्कार ही कहा जा सकता है। श्रम वह शक्ति है जिससे मनुष्य की सभी कलाओं का जन्म हुआ है। अनेक प्रविधियों का आविष्कारक होने का श्रेय भी मनुष्य को ही जाता है। धर्म, दर्शन

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 11, June 2026 Impact Factor: 8.2

और विज्ञान की रचना मनुष्य की इसी कोशिश का परिणाम हैं। प्रकृति से पर्यावरण बनता है और पर्यावरण मनुष्य को अनुकूलता के लिये मजबूर करता है। पर्यावरण के अनेक तत्व संस्कृति में देखे जा सकते हैं।

प्रारंभिक मानव अभिव्यक्ति के लिये संकेतों का उपयोग करता था, संकेतों से शब्दों का निर्माण हुआ। शब्द अभिव्यक्ति के वाहक बने, अभिव्यक्ति की राह में अनेक प्रतीक आये, जिन्होंने मनुष्य के अर्थ और आशय को और स्पष्ट किया, प्रतीकों ने अनेक मिथकों को जन्म दिया। संकेत, शब्द, प्रतीक और मिथक भाषा के आधार बने। बोली और भाषा ने कला साहित्य के निर्माण की संभावनाओं को साकार रूप दिया। मनुष्य की संश्लिष्ट अभिव्यक्ति ने कला साहित्य के उन चरम उत्कर्षों को पाने की कोशिश की जिसमें मनुष्य के उच्च सुख की प्राप्ति होती हो। बोली और उसके बाद में भाषा ने संस्कृति की धरोहर को सबसे अधिक मूल्यवान और अर्थवान समृद्धि दी। शब्दों के उच्चारण घोष और लय संगीत के स्वर बन गये।

शब्दों ने अनेक गाथाओं को जन्म दिया, कितने ही शब्द लोक कथाएँ बने, शब्द प्रतीक और मिथक बनने से भी नहीं बचे तो कहीं शब्द अर्थ, दर्शन और विज्ञान की भाषा में व्यक्त हुए। मनुष्य ने हजारों वर्षों में कुटुम्ब, कबीला, गोत्र, परिवार, समाज, परम्पराएँ, प्रथाएँ, रीति–रिवाज, अनुष्ठान, संस्कार, संबंध, खेलकूद, गीत, नृत्य, कला, शिक्षा, नीति, धर्म, दर्शन, अदृश्य जगत, विश्वास आदि के जरिये सांस्कृतिक वातावरण का ताना–बाना अपने लिये अपने आसपास बुना है।

संस्कृति मनुष्य की वह रचना है, जिसमें मानव की सृजनात्मक शक्ति और योग्यता का चरम निहित है। संस्कृति में मनुष्य समाज के इतिहास की विकास कड़ियों के सूत्र दर्ज हैं। संस्कृति जीवन और उसकी क्रिया–प्रतिक्रियाओं का संचय है। उसमें प्रकृति और मनुष्य की सहभागिता से निर्मित जीवन की भौतिक सामग्रियों की उपयोगिता की संकल्पनाएँ समाहित हैं। संस्कृति में मनुष्य के बाह्य और आन्तरिक मूल्यों की अभिव्यंजना होती है। संस्कृति मनुष्य की नियन्ता और उपभोग्या भी है। संस्कृति वह जीवन शैली है, जिसे मनुष्य पूर्वजों से ग्रहण करता आया है। संस्कृति मनुष्य को जीवन जीने की एक उच्च भाव–भूमि प्रदान करती है। संसार में अनेक प्रकार की संस्कृतियाँ विद्यमान हैं।

संस्कृति का शाब्दिक अर्थ संस्कारों की सम्यककृति के रूप में है। सम्यककृति सिर्फ मानवीकृत हो सकती है। मानव की कृतियाँ ही संस्कृति का स्वरूप बनाती है। संस्कृति मनुष्य की सम्यक कृति है, सम्यक यानी सुविचारित। विचार भी जीवन का, चरित्र का, आचरण का, व्यवहार का, अभिव्यक्ति का, काव्य का, संगीत का, कला का, समाज का, देश का, विश्व का जो कुछ भी चरम हो, उसकी प्राप्ति का यही संस्कृति के अन्दर आता है। संस्कृति अपने आप में बहुत व्यापक और गंभीर अर्थ का बोधक है। यह कहना सर्वथा गलत नहीं होगा कि सुधरे सँवरे संस्कार और आचार–विचारों का समच्चय ही संस्कृति है। भारत में प्रायः दो तरह की संस्कृति की व्याख्या की जाती रही है, एक है प्राचीन सुविचारित वैदिक संस्कृति और दूसरी व्यापक लोक संस्कृति।

वैदिक संस्कृति में ब्राह्मण कहा जाने वाला वर्ग सर्वश्रेष्ठ था, उन्होंने अपनी संस्कृति के विकास की रूढ़ी का समर्थन यहाँ तक किया कि वेदों को शूद्र नहीं पढ़ सकते थे। वे अछूत थे। उन्हें एक मात्र सेवा का कार्य दे दिया गया था। ऐसी संस्कृति जो कभी व्यापक और उदार सर्वजन हिताय कही जाती थी उस समय वैदिक संस्कृति में एक प्रकार की संकीर्णता भी पनपी थी। वैदिक संस्कृति का यह एक धुंधला पृष्ठ था, या विकृति कही जा सकती है जिसने मनुष्य को ऊँच–नीच की अंधी खाई में ढकेल दिया था।

प्राचीन भारतीय वाङ्मय में संस्कृति शब्द का प्रयोग आचार–विचार के अर्थ में पाया जाता है। अंग्रेजी का ''कल्चर'' शब्द संस्कृति का अनुवाद है। संस्कृति शब्द संस्कृत, हिन्दी, उर्दू आदि अन्य भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं में युगों से प्रतिष्ठित है। सभी

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 11, June 2026 Impact Factor: 8.2

बोलियों और भाषाओं में संस्कृति का समग्र वह अर्थ ग्रहण किया जाता है जो मनुष्य जीवन के केन्द्र में हो। ''संस्कृति वह सांचा है जिसमें समाज के विचार ढलते हैं, वह बिन्दु है जहाँ से जीवन की समस्याएँ देखी जाती हैं।''

संस्कृति में सभ्यता का और कभी सभ्यता में संस्कृति का संतरण होता रहता है। संस्कृति में से सभ्यता का जन्म होता है और जब सभ्यता का रूप विशाल हो जाता है, तो उसमें अनेक संस्कृतियों को समाहित करने की और धारण करने की शक्ति होती है। सभ्यता व्यक्तिगत रह सकती है, लेकिन विराटजन में सामूहिक संस्कृति ही रहती है।

सभ्यता और संस्कृति मनुष्य के चरित्र के बाह्य और आंतरिक साक्ष्य हैं। सभ्यता शरीर है तो संस्कृति अंतकरण है। सभ्यता का मतलब व्यवहार से है। सभ्यता से संस्कृति व्यक्त होती है। सभ्यता का अर्थ होता है शिष्टाचार। सभ्यता का शाब्दिक अर्थ है सभा में बैठने की योग्यता है और व्यापक अर्थ में लें तो समाज में रहने की योग्यता भी लिया जा सकता है। सभ्यता का संबंध नागरिकता से है। सभ्यता मनुष्य के नैतिक मूल्यों की व्यवहारिक पाठशाला है, जिसमें मनुष्य विशिष्ट बौद्धिक विकास की चरम स्थिति, उच्च नैतिक विचार के पद पर आसीन होता है।

सभ्यता में आचरण की प्रत्यक्ष उच्चता और जीवन के प्रचलित नियमों, सिद्धान्तों की रक्षा का बोध मानव मस्तिष्क में सदैव रहता है। संस्कृति और सभ्यता के स्वरूपों में मौलिक भेद होते हैं। संस्कृति मनुष्य के बौद्धिक कलात्मक विकास की अवस्थाओं को सूचित करती है और सभ्यता भौतिक विकास को इंगित करती है।

संस्कृति आत्मा की वस्तु है जबकि सभ्यता शरीर के बाहर के कार्य व्यवहार की संस्कृति और सभ्यता दोनों में समय सापेक्ष बदलाव आते हैं। एक सभ्यता दूसरी सभ्यता के सम्पर्क में आने से प्रभावित होती है, इसी प्रकार संस्कृतियाँ एक–दूसरे पर अपना प्रभाव डाले बगैर नहीं रह सकती हैं। भारत में कई संस्कृतियों का आगमन हुआ और आपस में उनकी अनेक अच्छाइयों और बुराइयों का दोनों संस्कृतियों ने आत्मसात किया। सभ्यता में चरित्र को बाह्य शुचिता पर ध्यान दिया जाता है, जबकि संस्कृति अन्तःकरण की शुचिता से प्रारंभ होती है।

गाय, भैंस चराने वाले गडरियों की मौखिक परम्परा इतनी विकसित थी कि वैशम्पायन व्यास ने जब उसे लिखित रूप में संकलित किया तो वह वेद की शक्ल में इसी लोक संस्कृति के उज्ज्वल विश्व की सबसे पहली विकसित संस्कृति और सभ्यता की प्रतीक बनी। इसका मतलब वेदों के पूर्व भारत में एक समृद्ध लोक संस्कृति मौजूद थी, जिसका वजूद मौखिक थे तत्वों से वेदों की सृष्टि हई है। वैदिक संस्कृति औप सभ्यता के विकसित हो जाने पर भी संस्कृति की लोकधारा समाज में निरन्तर बहती रही। वैदिक संस्कृति के से सूत्र सभ्य कहे जाने वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के हाथ में आ गये थे, शूद्र कहा जाने बाला वर्ण जिस दबाव में जी रहा था, उसने लोक संस्कृति के निर्माण और नैरन्तर्य में अत्यधिक मदद की है।

जहाँ वैदिक संस्कृति में बेट ध्वनि सुनना भी शद्रादि के लिये सर्वथा वर्जित था, उस समय वैदिक संस्कृति का सोच बहुत संकुचित हो गया था, वहीं एक ऐसी लोक संस्कृति भी निरन्तर चलती रही जिसे उस समय तांत्रिक संस्कृति कहा जाता था।

जो आगम तत्व वेदों के भी उपजीव्य हैं, वे लोक या तांत्रिक संस्कृति में पहले से प्रतिष्ठित हुए हैं। निगम और आगम लोक में व्याप्त थे जिन्हें बाद में वेद और तंत्र कहा गया। आगम का क्षेत्र बहुत व्यापक है। आगम शिव पार्वती के मिथ से जुड़ा जो लोक की ही व्याख्या है –

आगतं शिववक्त्रेभ्यो गतं च गिरिजाश्रुतौ।
मत्रं च वासुदेवस्य तस्मादागम उच्यते।।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 11, June 2026
Impact Factor: 8.2

जिस वैदिक संस्कृति में शूद्रों को वेदाध्ययन से वंचित किया गया, जिसे संस्कार योग्य ही नहीं समझा गया, उसे यज्ञ करने की पात्रता से वंचित रखा था, यह सब कुछ वैदिक संस्कृति की जड़ता ही थी। इसी कारण भगवान बुद्ध के माध्यम से जनवादी बौद्ध धर्म का अभ्युदय हुआ जिसमें ऐसे लोगों के कल्याण की बात सिद्धान्त रूप से रखी गयी थी, जो उच्च वर्ग से तिरस्कृत रहे थे। तथागत ने बहुजन हिताय की बात का सदैव ध्यान रखा।

उन्होंने मनुष्य की महत्ता सर्वोपरि प्रतिपादित की, भगवान बुद्ध ने ढाई हजार वर्ष पूर्व यह कार्य किया था जिसमें पीड़ित और पद दलितों के उत्थान की बात कही गई थी। केवल बात ही नहीं की गई थी, बल्कि बुद्ध ने ऐसा समाज ही निर्माण कर लिया था, जो सभी भेदभावों से ऊपर था, लोक संस्कृति में पहली बार इस प्रकार की घटनाएँ दर्ज की गई थीं।

शिल्प कर्म कोई भी जाति के लोग कर सकते थे। ब्राह्मण जाति के लोग कृषक, शिल्पी, व्यवसायी और सिपाही हो सकते थे। बैलगाड़ियों से व्यापार होता था। ऐसे व्यवसायी को ''वाणिजा'' कहा जाता था, इसी ''वाणिजा'' से बणजारा, बनजारा जाति का प्रादुर्भाव हुआ जो बैलगाड़ियों में नमक आदि किराना सामग्री को लादकर 'बालद' ले जाते थे। वर्तमान में बनजारा जनजाति उसी जाति की शाखा है। बनजारा 'कंघी' के आविष्कारक भी माने जाते हैं।

बौद्ध कालीन जीवन में सम्पन्नता के कारण लोक कला के फलने–फूलने के अच्छे अवसर थे। नृत्य, नाटक, गीत, वाद्य, विभिन्न खेल, पशु और पक्षियों की लड़ाई, कुश्तीकला आदि का प्रचलन था। लोक समाज में जुए का चलन था। कच्ची शराब पीने का रिवाज आजकल की जनजातियों की तरह आम था। पालि साहित्य अनेक नाटकों, नृत्य, गीत, वाद्य संगीत, गायकों (भाट–बेतालों) के वर्णन से भरे पड़े हैं. लोक नाटकों के अनेक प्रभेद थे। बुद्धकालीन लोग ज्योतिष में अधिक विश्वास करते थे। शकुन–अपशकुन समाज में प्रचलित थे। तंत्र–मंत्र, जादू–टोने पर लोगों को खूब विश्वास था। मनौतियों का प्रचलन था। फसल का बड़ा उत्सव मनाया जाता था। आज भी सारे त्यौहार फसल चक्र पर निर्भर हैं।

अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा और वृक्षों की पूजा का रिवाज था। व्रत–उपवास करने की परिपाटी थी। पर्वों पर नदी में स्नान करने का बड़ा महत्व था। आज भी देखा जा सकता है। गोबर से लीपना, चौक पूरना, घरों को सजाना आदि स्त्रियों का उत्तरदायित्व था। बौद्धकालीन जातक कथाएँ लोक में प्रचलित कथाएँ ही हैं। यद्यपि बौद्ध धर्म में आनन्द का उत्सव नहीं है, उसमें जीवन के दुःख और शरीर की क्षण भंगुरता का विक्षोभ है।

संसार की अन्य संस्कृतियों के मुकाबले भारतीय संस्कृति सबसे प्राचीन और श्रेष्ठ मानी जाती है, विभिन्न देशों की संस्कृतियों में भारतीय संस्कृति के कोई न कोई तत्व अवश्य मिलते हैं। मिस्र, सीरिया, ईरान, बेबीलोनिया, रोम और चीन की संस्कृतियाँ भी दुनिया की पुरानी संस्कृतियों में से हैं। इन देशों में मिले संस्कृति के चिन्हों में भारतीय संस्कृति का व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है।

विदिक, उपनिषद, स्मृति, सूत्र, पुराण, तंत्र, बौद्ध और मध्यकाल के बाद आज तक भारतीय संस्कृति ने अपने रूप को अखंडित और अक्षुण्ण बनाये रखा। देशकाल परिस्थिति के कारण उसमें अनेक परिवर्तन, परिवर्द्धन और पुनसृजन के अवसर आये, फिर भी भारतीय संस्कृति नष्ट नहीं हुई। भारतीय संस्कृति का यह स्रोत आज तक विगत ईसा पूर्व पाँच हजार वर्ष के पहले से अविच्छिन चला आ रहा है।

पुत्र जन्म, यज्ञोपवीत और विवाहादि उत्सवों, पर्व त्यौहारों पर सुमधुर गीत गाये जाने का उल्लेख वैदिक ग्रन्थों में है। यज्ञ वेदियों पर कलात्मक मिट्टी के कलश, आटे से मांडने बनाने की प्रथा लोक संस्कृति से ही ली गई है। वैदिक सभ्य समाज शूद्र कहे जाने वाले बुनकरों से वस्त्र क्रय करते थे। कृषि औजार, भवन, वस्त्र मृण्भांड आदि बनाने वाले शिल्पकारों पर उस समय

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 11, June 2026 Impact Factor: 8.2

का उच्च वर्ग पूरी तरह आश्रित था। काम करने के बदले मुद्राएँ या अन्न वस्त्र देने का वैदिक रिवाज लोक संस्कृति की प्रमुख परम्परा रही है। वेदों में शक्ति पूजा का प्रावधान लोक संस्कृति की देन है। संक्षेप में यह कहना उचित होगा कि वेदों ने लोक जीवन की उन सभी चीजों को ग्रहण करने में कोई आपत्ति नहीं की, कि जो मनुष्य को श्रेष्ठता की ओर ले जाने में सहायक होती थीं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि संस्कृति का मूल उद्देश्य मनुष्य के आंतरिक गुणों का विकास करना है। विभिन्न संस्कारों के माध्यम से उसकी प्रतिभा और योग्यता को उजागर करना है। संस्कृति के जरिये मनुष्य जीवन के उस सत्य को पहचाने जिससे मनुष्य, मनुष्य बनता है। मनुष्य जन्म से संस्कृति के मूल सिद्धान्तों और तत्वों को ग्रहण करता चलता है। धीरे–धीरे मनुष्य के प्रत्येक क्रियाकलाप, चिन्तन और अभिव्यक्ति में संस्कृति का गहरा अमिट प्रभाव पड़ता है। उसकी आत्मा संस्कृति के रंग में रंग जाती है। उसका मन–मस्तिष्क अपनी संस्कृति से अगाध प्रेम करने लगता है। मनुष्य के अवचेतन तक में संस्कृति की सुगंध समा जाती है। स्वप्न और स्मृति तक में संस्कृति का सौरभ समा जाता है। मनुष्य के द्वारा रचित सभी कृतियाँ लोक की धरोहर है। मनुष्य की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक और आध्यात्मिक, भौतिक उपलब्धियाँ लोक से बाहर नहीं होतीं। लोक के केन्द्र में मनुष्य है। स्त्री–पुरुष लोक की धुरी के दो पहिए हैं। दोनों से मिलकर लोक का निर्माण हुआ। मनुष्य लोक का सर्जक है, प्रकृति का उपभोक्ता, मनुष्य पृथ्वी पुत्र है। पृथ्वी मनुष्य की माता है, माता भूमिः पुत्रोहंऽपृथिव्याः।

संदर्भ स्रोत :–

[1]. बघेलखण्ड के उत्सव–त्योहार आलेख विश्यश्री पृ. 35
[2]. बघेलखण्ड के उत्सव–त्योहार आलेख विश्यश्री पृ. 36
[3]. शिल्पा सिंह बघेलखंड का जनजातीय समाज के धर्म और दर्शन पृष्ठ 70
[4]. सुलभा सिंह बघेलखंड का जनजातीय समाज के धर्म और दर्शन पृष्ठ 122
[5]. टेट गजट 12
[6]. भगवती प्रसाद शुक्ल भाषा साहित्य 91–92
[7]. भगवती प्रसाद शुक्ल भाषा साहित्य, पृ0–96
[8]. गोमती प्रसाद विकल बघेली भाषा और संस्कृति पृ. 52
[9]. सेंगरों का इतिहास, बघेलखण्ड के विशेष संदर्भ में।